बिहार में पृथकरण आंदोलन

मो0 सनाउल्लाह*

20वीं शताब्दी के प्रारंभिक दशक में जब सम्पूर्ण भारत में राष्ट्रवादी भावना फैल रही थी बिहार की नव जागृत बौद्धिक चेतना आश्चर्यजनक ढंग से क्षेत्रवाद को बढ़ावा दे रही थी। वस्तुतः अपने अस्तित्व के प्रति संवेदनशील शिक्षित बिहारियों के लिए बिहार के स्वतंत्र पहचान की खोज में आंदोलनरत होना न सिर्फ औचित्यपूर्ण था बल्कि अनिवार्य था। यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है कि दुनिया के नक्शे पर 21,58′10′′ उत्तरी अक्षांश तथा 80′19′50′′ से 88′19′50′′ से 88′17′40′′ पूर्व देशान्तर के बीच स्थित वह भू–भाग, जिसे आज बिहार के नाम से जाना जाता है, कभी भी अपनी अस्मिता के प्रति जागरूक नहीं रहा। परिणाम यह निकला कि प्राचीन काल में सम्पूर्ण आर्यावर्त की राजनीतिक सत्ता का केन्द्र तथा चार–चार गणराज्यों को अपने अंदर समाविष्ट करने वाला यह अनाम प्रदेश कब शासक से शासित बन गया, पता भी नहीं चला। मध्यकाल में इसकी दशा शोषित प्रांत की हो गई। बिहार पर बंगाल के नियंत्रण के बाद इसका अपना कोई वजूद नहीं रहा। न राजनीतिक क्षेत्र में और न विश्व के मानचित्र पर। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड जाने वाले बिहारी युवकों को इस असम्मानजनक सच्चाई का पता तब चला जब यह कहे जाने पर कि वे बिहार के निवासी हैं, उनके यूरोपिय मित्र अथवा अन्य सहपाठी कहते अरे बंगाल कहो।'' वस्तुतः तत्कालीन पाठ्य पुस्तकों तथा भौगोलिक मानचित्रों में बिहार का कहीं नामोनिशान नहीं था। बंगाल प्रांत में बिहार की पहचान के खो जाने का दर्द, आत्मसम्मान के खोने की पीड़ा और कुंठा और भी ज्यादा बढ़ जाती थी। जीविकोपार्जन के लिए जब पढ़ा–लिखा बिहारी युवक नौकरी की तलाश में निकलता, प्रशासनिक तंत्र पर हावी बंगाली समुदाय की भेदभाव नीति को देख उसे यह एहसास होता कि वह अपने प्रांत में मौलिक सुविधाओं से वंचित, दोयम दर्जे का नागरिक बना हुआ है। शिक्षित बंगाली समुदाय ने अपनी स्वामीभक्ति दिखाकर अंग्रेजों की दृष्टि में अपने आप को विश्वासपात्र साबित कर लिया था। बिहारियों को शाश्वत रूप से मंद बुद्धि का पिछड़ा तथा अयोग्य माना जाता था, फलतः सरकारी सेवाओं में उनका प्रवेश दुष्कर कार्य था।

डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद अपनी आत्मकथा में लिखते हैं– बिहारी लोग सरकारी दफ्तरों तक नहीं पहुँच पाते थे, ऊँचे ओहदे को कौन कहे।'' बिहार के प्रशासनिक पदों को भरने के लिए कलकत्ते से अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त बंगालियों को लाया जाता था। सरकारी सेवा के साथ–साथ अन्य पेशागत वृतियों तथा वकालत शिक्षक कार्यों में भी बंगालियों का आधिपत्य था। इतना ही नहीं, बिहार में बस चुके बंगालियों ने बिहार के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में भी अपनी पकड़ मजबूत कर ली थी तथा वे अंग्रेजों के बाद स्वयं को दूसरा विशिष्ट वर्ग मान रहे थे। अंग्रेजों की भांति उन्होंने भी अपनी अलग बस्तियां अथवा मोहल्ले बना लिये थे। इन मोहल्लों की एक अपनी अलग अभिजात्य संस्कृति थी जो अनजाने ही बिहार की सामाजिक बुनावट को प्रभावित कर रही थी।

बिहार के शिक्षित वर्ग में अग्रणी– कायस्थ जाति के नवसाक्षरों को बंगालियों की विशिष्टवादिता स्वीकार्य नहीं थी। सरकारी नौकरियों में समायोजन के क्रम में, बंगालियों की उपस्थिति उनके लिए एक बड़ा अवरोध था। कोई आश्चर्य नहीं की जीवन यापन से जुड़े सवालों के कारण ही सर्वप्रथम कायस्थों में ही पृथक्कतावादी प्रवृति पैदा हुई। बंगाल से बिहार को अलग करवाने के लिए शिक्षित हिन्दुओं ने इलाहाबादी कायस्थ सभा तथा मुसलमानों ने अलीगढ़ के मुस्लिम संगठनों से मिलकर आंदोलनों की वैचारिक पृष्ठभूमि बनानी शुरू कर दी। बिहारियों के उज्ज्वल भविष्य के लिए पृथक्कता के औचित्य पर प्रकार डालने वाले प्रारंभिक नेताओं में सैयद अली, सईद हसन मजहरूल हक, महेश नारायण तथा सच्चिदानन्द सिंह का नाम उल्लेखनीय है।

1885 के बाद ब्रिटिश सरकार, बंगाल के क्रमबद्ध रूप से बढ़ते राष्ट्रीय आंदोलन की गति को देख चिंतित थी तथा यथाशीघ्र इसके प्रसार को रोकना चाहती थी। बंगाल के अति–विशाल भू–क्षेत्र में राष्ट्रवादी भावना को कूंद करने का सबसे सरल तरीका था– सामाजिक विभेद पैदा कर, लोगों का ध्यान राष्ट्रीय मुद्दों से हटा देना। अपना इसी कार्य योजना के तहत अंग्रेजों ने क्षेत्रीय अलगाववाद तथा साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया। बंगाल के राष्ट्रवादी बुद्धिजीवियों तथा विशिष्टवादी प्रवृति के कारण, वे बिहारी समाज में घुल मिल नहीं सके। सरकारी सेवा से जुड़े बंगाली पदाधिकारी, शिक्षक तथा वकीलों का सम्बन्ध, बिहार समाज के मात्र जमींदार तथा बड़े भू–पतियों से था। फलतः अपने अथक प्रयास के बावजूद वे कभी स्वाभाविक रूप से बिहार के जन आंदोलन में प्रणेता की भूमिका नहीं निभा सके। ब्रिटिश राजनयिकों ने सामाजिक असमानता के इस अर्न्तविरोध से यथासम्भव लाभ उठाया तथा बिहार में बंगालियों के द्वारा लगाई जाने वाले राष्ट्रवादी आंदोलन की पौधों को कुचल डाला।

सरकार ने बिहार में शिक्षित युवा वर्ग की बढ़ती संख्या और सरकारी सेवाओं में उनके उचित प्रतिनिधित्व को ध्यान में रखते हुए, यह प्रस्ताव रखा कि न्यायिक तथा प्रशासनिक विभाग के अधीनस्थ पदों पर सिर्फ बिहारियों की ही

शोध छात्र, इतिहास विभाग वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

नियुक्ति की जाए। पटना के आयुक्त जरकिंस ने इस प्रस्ताव की वकालत करते हुए दलील दी की यद्यपि ऐसा करने से प्रशासनिक दक्षता के गुणस्तर में थोड़ी गिरावट आएगी, फिर भी राजनीतिक औचित्य की दृष्टि से यह सर्वथा उपर्युक्त कदम होगा। इस निर्णय ने, व्यापक पैमाने पर बंगाली–बिहारी विभेद को बढ़ा डाला। समकालीन आंग्ल–भारतीय प्रेस ने भी इस विवाद को गहराई से उभाड़ा। बिहार के कुछ अखबारों ने भी बंगाली विरोधी कई लेख छापे। मुंगेर के मर्ग–ई–सालेमान ने अपने 7 फरवरी 1876 के संस्करण में बिहार बिहारियों के लिए नारा दे डाला। कासिद ने भी 22 जनवरी 1877 के संस्करण में बिहार के हित की लाश पर बंगाल बिहार एकीकरण की खुली आलोचना की। इस पत्र ने आगे लिखा कि बंगालियों को राज्य का संरक्षण प्राप्त है और बिहारी शोषित बने हुए हैं।

बंगाल से बिहार के पृथ्थकरण हेतु चलाए जाने वाले वैचारिक संघर्ष के प्रथम चरण में, बंगाल की अखंडता तथा बिहार बंगाल पृथ्थकरण के समर्थकों ने अपने–अपने पक्ष में दलीलें दी, और सरकार के समक्ष अपने पक्ष को रखा। ब्रिटिश सरकार इस नवोदित विवाद को न सुलझाना चाहती थी और न ही समाप्त होने देना चाहती थी। मामले को उलझाए रखने के लिए, उसने टाल–मटोल की नीति अपनाई, ताकि समय के साथ–साथ बंगाल में स्वतः दो परस्पर विरोधी वैचारिक मंच बन जाए और किसी भी प्रकार की राष्ट्रवादी भावना का उदय न हो। सरकार की यह नीति सफल रही। इसी बीच बंगाल के गवर्नर सर ऐश्ले ईडन ने एक परिपत्र जारी कर, बिहार के अन्तर्गत कतिपय सरकारी सेवाओं को केवल बिहारियों के लिए आरक्षित कर दिया। बंगाल से प्रकाशित पत्रों ने ईडन के इस निर्णय की कड़ी आलोचना की। 17 जनवरी 1881 के सहचर में परिपत्र के नकारात्मक पहलुओं का विश्लेषण करते हुए कहा गया कि उक्त सरकारी आदेश का उद्देश्य बिहार में बंगालियों की नौकरियों पर प्रतिबंध लगाना है। इस आरक्षण व्यवस्था से बंगाल का शिक्षित वर्ग जहां अपने आक्रोश की पराकाष्ठा पर था, बिहार के नवोदित मध्यम वर्ग के हौसले बुलंद थे। उसकी मांगे बैठने लगी। शिक्षित बिहारियों ने अपनी पुरानी मांगों के साथ–साथ बंगाल विधान परिषद तथा कलकता विश्वविद्यालय के सिनेट में भी उचित प्रतिनिधित्व की मांग शुरू कर दी। यह मांग भी रखी गई कि कलकत्ता उच्च न्यायालय में कम से कम एक न्यायाधीश बिहारी अवश्य हो।

बिहार को बंगाल से पृथक करने का विचार ब्रिटिश सरकार के पदाधिकारियों के मस्तिष्क में 1870 में ही आ चुका था। चेश्नी की पुस्तक इंडियन पॉलिटी के अनुसार तत्कालीन सरकारी पदाधिकारियों ने बंगाल के अति विस्तृत सीमा क्षेत्र को देखते हुए, प्रशासनिक दृष्टि से इसे पुनर्गठित करने की राय बनाई थी। दुर्भाग्यवश सारी बातें विचार–विमर्श तक ही सिमट कर रह गई और राज्य के बंटवारे की दिशा में कोई सार्थक कदम नहीं उठा।

पृथककरण सम्बन्धी वैचारिक आंदोलन को सर्वाधिक प्रेरणा बंग–भंग योजना से मिली। लॉर्ड कर्जन द्वारा प्रस्तुत बंगाल विभाजन योजना के अन्तर्गत बंगाल को दो भागों में विभक्त करने का प्रस्ताव था। इस प्रस्तावित विभाजन से पूर्वी बंगाल में मुसलमानों की संख्या सर्वाधिक हो जाती, जबकि बंगाल में बिहारियों का अनुपात बढ जाता। आर्थिक राजनीतिक तथा रोजगार के क्षेत्र में विकास की विपुल सभी संभावनाओं को देखते हुए पूर्वी बंगाल, जिसमें आसाम भी शामिल था, के मुसलमानों ने तथा बंगाल के बिहारियों ने विभाजन में अपनी गहरी दिलचस्पी दिखाई। यह सच है कि बंग–भंग के विरोध में शुरू किये गये स्वदेशी तथा बहिष्कार आंदोलन में बिहार की अहम भूमिका उल्लेखनीय रही, किन्तु इस तथ्य से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि आंदोलन, बिहार के चंद शहरी क्षेत्रों में ही सीमित था तथा इसके संचालक बिहार में बसे बंगाली समुदाय के सदस्य थे। बिहार के शिक्षित वर्ग तथा नेताओं ने अपने आपको आंदोलन से अलग–थलग रखा था, जो उन राजनीतिक हितों के लिए आवश्यक भी था। पटना से प्रकाशित समाचार पत्रों ने सरकार से बंगाल विभाजन के स्वरूप में परिवर्तन की मांग करते हुए सुझाव दिया कि यदि प्रशासनिक दृष्टि से विभाजन आवश्यक ही है तो बेहतर होगा कि बिहार को बंगाल से अलग कर दिया जाए। पृथ्थककरण आंदोलन के प्रारंभिक दो प्रमुख नेता– सच्चिदानंद सिन्हा और महेश नारायण ने इसी भाव के दो लेख लिखे जिसे हिन्दुस्तान रिव्यू ने ''दि पार्टिशन ऑफ बिहार'' नामक पुस्तक में प्रकाशित किया। सच्चिदानंद सिन्हा द्वारा लिखित इस पुस्तक ने पृथ्थककरण सम्बन्धीं भावना को जन–आकांक्षा बना दिया और फलतः यह कहा जाने लगा कि जिस प्रकार बंगाल के एकीकृत स्वरूप को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए मांग करने का अधिकार बंगालियों को है, उसी प्रकार बिहारियों को भी अपने लिए स्वतंत्र बिहार के निर्माण की मांग का नैतिक अधिकार है।

बंगाल के हर वर्ग में आंदोलन को लेकर तीव्र प्रतिक्रिया थी। बंगाली भद्रलोक ने इस प्रकार की मांगों को व्यक्तिगत स्वार्थ से प्रेरित बताया। बिहार हेराल्ड के सम्पादक गुरू प्रसाद सेन ने आंदोलन की कटु आलोचना की। अमृत बाजार पत्रिका तथा कलकता के कई अन्य अखबारों ने भी आंदोलन के नेताओं पर आरोप लगाया कि सरकारी नौकरियों में अधिकतम स्थान पाने की क्षुद्र भावना से वे पृथ्थककरण आंदोलन चला रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. आधुनिक भारत – विपिन चन्द्र
2. आज का भारत – रजनी पाम दत्त
3. आधुनिक बिहार का सृजन – डॉ0 विजय चन्द्र प्रसाद चौधरी
4. चौधरी राधाकृष्ण– हिस्ट्री ऑफ बिहार